Quest Journals
Journal of Research in Humanities and Social Science
Volume 5 ~ Issue 9 (2017)pp: 52-56
ISSN(Online):2321-9467
www.questjournals.org

Research Paper

भारत में प्रशासन और सूचना का अधिकारःचुनौतियां तथा समाधान

डॉ0 सत्यनारायण राजपुरोहित
वरिष्ठ व्याख्याता–राजनीति विज्ञान
राजकीय महाविद्यालय, नोखा (बीकानेर)

किसी भी प्रगतिशील देश की राजनीतिक व्यवस्था, राष्ट्र निर्माण एवं विकास की प्रक्रिया में अपनी भूमिका तभी सार्थक कर सकती है जब उस राष्ट्र की राजव्यवस्था ने लोकतांत्रिक मूल्यों को पूर्णरूप से आत्मसात कर लिया हो। विश्व के अन्य लोकतांत्रिक राष्ट्रों की भांति भारतीय राजव्यवस्था भी संसदीय प्रणाली की विशिष्टताओं से युक्त विराट लोकतांत्रिक व्यवस्था है। इस व्यवस्था में जनता की सहभागिता को सुनिश्चित किया गया है। यह कहा जाता है कि मानव के अस्तित्व से जुड़े हर पहलू के लिए, चाहे वह ज्ञानार्जन हो या व्यवस्था में सुधार, सूचना व जनभागीदारी आवश्यक है। शासन में सूचना व जन भागीदारी लोकतंत्र को न केवल गुणात्मक बनाती है बल्कि सरकारी काम–काज में उत्तरदायित्व और पारदर्शिता को भी बढ़ावा देती है। अकसर यह कहा जाता है कि किसी भी वस्तु के निर्माण, उसके समुचित प्रयोग तथा उसमें परिवर्तन के लिए सूचना या उसके बारे में सम्पूर्ण ज्ञान या जानकारी का होना प्राथमिक शर्त है।

भारत में संसदीय लोकतंत्र का अब तक का अनुभव यह स्पष्ट करता है कि जनसहभागिता के अभाव में लोकतंत्र सफल नहीं हो सकता है। संसूचित नागरिक ही जनसहभागिता कर सकते हैं। अतः यदि हमें भारत में लोकतंत्र को सफल बनाना है तो जनता को सूचना के अधिकार से सृजित करना पड़ेगा।

आज विश्व सूचना और संचार क्रांति के दौर से गुजर रहा है। सूचना प्रौद्योगिकी ने सम्पूर्ण विश्व को एक विश्व गाँव में परिवर्तित कर दिया है। 'सूचना' के बढ़ते इसी महत्त्व के कारण वर्तमान में सूचना के अधिकार की माँग दिनोंदिन बढ़ती जा रही है। भारत की सरकार ने जानकारी प्राप्त करने की इसी माँग को ध्यान में रखकर 12 अक्टूबर, 2005 को सूचना का अधिकार नागरिकों को प्रदान किया है।

भारत में स्वतंत्रता से लेकर अब तक जो भी प्रशासनिक सुधार हेतु कानून, आयोग या समितियां बनीं, उन सबमें प्रशासन के संगठनात्मक ढांचे, कार्यक्षेत्र, सेवा शर्तों या कार्यप्रणाली पर ही जोर दिया गया था। स्वतंत्रता के पश्चात् यह अपनी किस्म का पहला कानून है या यह कहें कि ऐसा पहला प्रयास है जो प्रशासन तंत्र में खुलेपन की संस्कृति लाने को उत्सुक है। दरअसल, भारत में जहाँ सरकार और आम जनता के मध्य एक लम्बा फासला था, एक आम आदमी, जिसका जीवन सरकारी तंत्र का अत्याचार सहते हुए बीता था, अब वह पहली बार खड़ा होकर सरकारी अधिकारियों से यह सवाल पूछ सकता है कि किस कारण से सरकारी दफ्तर में उसका काम नहीं हुआ? इस अधिकार ने लोगों को यह ताकत दी है, जिसका प्रयोग वे पांच साल में एक बार नहीं, बल्कि अब हर दिन कर सकते हैं। सूचना का अधिकार प्रशासन में इसी पारदर्शिता को विकसित करता है।

12 अक्टूबर, 2005 तक आम जनता के पास प्रशासन व प्रशासनिक निर्णय प्रक्रिया की जानकारी प्राप्त करने के लिए कोई वैधानिक अधिकार नहीं था। भारत की लोकसेवा को समाज का एक बड़ा वर्ग भ्रष्ट, निकम्मी, संवेदनशून्य तथा गैर–जिम्मेदार सेवा के रूप में देखता था लेकिन अब सूचना के अधिकार कानून से केन्द्र और राज्य सरकारों से आम नागरिक को यह प्रश्न पूछने का हक मिल गया है कि उसे निर्धारित सेवाएँ और सुविधाएं क्यों नहीं मिल रही है? यह कानून स्वतंत्र भारत में बना पहला ऐसा कानून है, जिसे आम आदमी के जानने और जीने के अधिकार से जोड़ कर देखा गया है, इस कानून ने आम आदमी को सवाल पूछने की हिम्मत दी है तथा शासन और प्रशासन में बैठे अधिकारियों को पहली बार लगा कि कोई भी सरकारी दस्तावेज देख सकते हैं, हर कार्य का निरीक्षण कर सकते हैं और हर बिन्दु पर साल पूछ सकते हैं। सूचना पाने के इस अधिकार के माध्यम से प्रशासन के क्रियाकलापों की विसंगतियों को उजागर करने की जबर्दस्त सम्भावनाएं उत्पन्न हुई हैं।

21वीं सदी में जबकि लोक प्रशासन और निजी प्रशासन का भेद समाप्त हो रहा है, समाजवाद का स्थान पूंजीवाद ले रहा है, प्रशासन में ग्राहकोन्मुखता और बाजारोन्मुखता की माँग की जाने लगी है। अब सूचना के अधिकार को खुले समाज तथा प्रशासन का आवश्यक गुण माना जाने लगा है।

सवाल यह है कि सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 से लागू हो जाने के पश्चात् इसके क्रियान्वयन में आ रही बाधाओं का सामना किस प्रकार से किया जाए? प्रश्न का विषय है, यदि आम नागरिक सूचना हासिल कर लेता है लेकिन सम्बन्धित अधिकारी इसके बाद भी निष्क्रियता से पेश आये तो आम नागरिक क्या कर सकता है? सूचना के अधिकार अधिनियम के क्रियान्वयन को लेकर कई सारे प्रश्न उत्पन्न होते हैं।

अतः इस कानून के प्रभावी क्रियान्वयन व इसे और अधिक सशक्त बनाने के लिए निम्नलिखित उपाय किये जा सकते हैं –

(1) सूचना का अधिकार कानून लागू होने के पश्चात् इसकी प्रथम चुनौती शासन द्वारा जनता तक सूचना को सुचारु रूप से उपलब्ध कराने की है। यह अधिनियम तभी प्रभावकारी व लाभदायी होगा जब केन्द्र सरकार व राज्य की सरकारें देश की पूरी आबादी को इस लायक बनाएं, क्योंकि हमारे देश की लगभग 40 प्रतिशत जनसंख्या अशिक्षित है। जो पढ़ा–लिखा वर्ग है उनमें भी इस अधिकार के प्रति जागरूकता का अभाव है। सरकारी अधिकारियों में भी इस की प्रकृति और कार्यान्वयन के बारे में अज्ञानता का भाव है। इसलिए सरकारी अधिकारियों के साथ–साथ आम जनता को भी इसके लिए शिक्षित किया जाना अति आवश्यक है। सूचना उपलब्ध कराने की प्रक्रिया में लगे लोगों की मानसिकता इस कानून के कार्यान्वयन में सबसे बड़ी बाधा हो सकती है। सुझाव यह है कि शिक्षा और जागरूकता बढ़ाने से ही इन लोगों की मानसिकता बदली जा सकती है।

(2) सूचना के अधिकार कानून की प्रस्तावना में स्पष्ट किया गया है कि लोकतंत्र की स्थापना के लिए साधारण जनता को लोक सेवा संगठनों तथा संस्थाओं की जानकारी लेने व पारदर्शी सूचनाओं की आवश्यकता है। इस रूप में सूचना का अधिकार अधिनियम नागरिक का अधिकार है। अतः सूचना का अधिकार कानून के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए प्रत्येक नागरिक को अपने अधिकारों तथा कर्त्तव्यों के प्रति जागरूक होना पड़ेगा। आज जरूरत सिर्फ इस बात की नहीं है कि नागरिकों को सूचना का अधिकार दे दिया जाए, बल्कि यह भी है कि शासन प्रशासन की कार्य प्रणाली को भ्रष्टाचार मुक्त, कार्य कुशल तथा गतिशील बनाने के लिए जनता में जनहित के मुद्दों पर एकता तथा अपने कर्त्तव्यों के प्रति जागरूकता भी जरूरी है। सरकार का भी यह दायित्व है कि समय–समय पर नागरिकों द्वारा माँगी गई सूचनाओं को उपलब्ध कराए, क्योंकि आम जनता को यह भी नहीं मालूम है कि कौनसी सूचना किस विभाग से सम्बन्धित है और कौन अधिकारी सूचना दे सकता है। यह सरकार का भी दायित्व है। यानी सवाल सिर्फ 'राईट टू इन्फोर्मेशन' का ही नहीं, वरन् 'ड्यूटी टू इन्फोर्मेशन' का भी है।

(3) निरंतरता, पारदर्शिता और उत्तरदायित्व की भावना सुशासन के आवश्यक तत्त्व होते हैं। इस कानून के अस्तित्व में आने के बाद से देश व राज्यों की प्रशासनिक व्यवस्था में इन पहलुओं की मौजूदगी को महसूस किया जा सकता है, लेकिन यह भी सच्चाई है कि इस कानून को और ज्यादा ताकतवर बनाने के लिए और कदम उठाने की जरूरत है। सरकार द्वारा केन्द्र एवं राज्य स्तर पर सभी विभागों को निर्देश दिए जाने चाहिए कि वे इस कानून की धारा–4 के अंतर्गत अपनी वेबसाईट, सूचना पट्ट तथा सूचना निर्देशिका में अपने विभाग से सम्बन्धित सभी आवश्यक सूचनाएं उपलब्ध कराएं तथा प्रत्येक वर्ष इन समस्त सूचनाओं को अद्यतन (अपडेट) करते रहना चाहिए। यदि कोई विभाग सूचना कानून के इन प्रावधानों की अवहेलना करता है तो उस विभाग अथवा प्राधिकारी के विरुद्ध विधायी प्रावधान बनाए जाने चाहिए। सरकार द्वारा अपने स्तर पर भी इन सूचनाओं की जाँच करवाई जानी चाहिए कि सम्बद्ध विभागों द्वारा उपलब्ध सूचनाएं गलत, भ्रामक तथा वास्तविकताओं से परे तो नहीं है। इस हेतु सरकार चाहे तो अलग से 'सूचना जाँच एवं समीक्षा निकाय' बना सकती है। यदि जनता को सूचनाएं स्वतः मिलती रहेगी तो सूचना आवेदनों में स्वतः कमी आ जाएगी एवं विभागों का कार्य बोझ भी कम हो जायेगा।

(4) सूचना के अधिकार अधिनियम में कई कमियां मौजूद हैं। जैसे अधिनियम की धारा 8 में उन विषयों की सूची दी गई है, जिनसे जुड़े तथ्यों को सूचना के अधिकार के दायरे से बाहर रखा गया है। इनमें वे सूचनाएं शामिल हैं जिनके सार्वजनिक हो जाने से राष्ट्र की सुरक्षा, सम्प्रभुता, अखण्डता, अंतरराष्ट्रीय सम्बन्ध, तथा राज्य के सामाजिक, आर्थिक तथा वैज्ञानिक हितों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। मगर धारा–8 में उन सूचनाओं तथा परिस्थितियों को न तो स्पष्ट रूप से परिभाषित किया गया है, न ही सूचीबद्ध या रेखांकित किया गया है।

सूचना के कानून की धारा 8(1)सी में बताया गया है कि ऐसी सूचना, जिसके सार्वजनिक किए जाने से संसद या किसी राज्य के विधानमण्डल के विशेषाधिकारों का हनन होता है, उसे सूचना के अधिकार के तहत दिए जाने से रोका जा सकता है। संसदीय विशेषाधिकार के पेंच को एक उदाहरण से समझने का प्रयास करते हैं।

अमरीका से परमाणु समझौते के दौरान यू.पी.ए. की सरकार को जब लोकसभा में विश्वास मत प्राप्त करना था, उससे कुछ घंटे पहले भारतीय जनता पार्टी के तीन सांसदों ने सदन में नोटों की गड्डियां उछाल कर समाजवादी दल और कांग्रेस पर यह आरोप लगाया कि ये नोटों से भरे बैग उन्हें सरकार के पक्ष में विश्वास मत के दौरान वोट देने के लिए रिश्वत के रूप में दिए गए हैं, जिसे एक मीडिया चैनल ने स्टिंग ऑपरेशन में कैमरे में रिकार्ड कर लिया था और उसे लोकसभा अध्यक्ष सोमनाथ चटर्जी को सौंप दिया था, बाद में कुछ गैर सरकारी संगठनों ने जब सूचना के अधिकार के तहत आवेदन करके वीडियो टेप सार्वजनिक करने की माँग की, तो लोकसभा ने टेप को सार्वजनिक करने से यह कह कर मना कर दिया कि टेप देना असम्भव है, क्योंकि संसदीय समिति के पास जाँच प्रक्रियाधीन है, जब तक जाँच पूरी नहीं हो जाती, तब तक इस सूचना के दिए जाने से धारा 8(1)(सी) का उल्लंघन होता है। अधिनियम में यह भी निर्देश दिया गया है कि माँगी गई सूचना व्यापक सामाजिक हित में जरूरी है तो इसके देने में लोक सूचना अधिकारी को सूचना प्रकट कर देना चाहिए। यहाँ उपर्युक्त विवेचन का सार यह है कि लोक सूचना अधिकारी को अधिनियम की व्याख्या लोक हित में, सकारात्मक ही करनी चाहिए। निःसंदेह राष्ट्र की सुरक्षा अथवा राष्ट्र की एकता व अखण्डता राष्ट्र हित का संवेदनशील मामला है, लेकिन राष्ट्रहित, न्यायालय की अवमानना और संसदीय विशेषाधिकारों के हनन शब्दों का मनमाने तौर पर इस्तेमाल कर आम जनता को अपने अधिकारों से वंचित रखना जायज है?

विदेश नीति के बारे में क्या भारतीय जनता को जानने का हक नहीं है? अतः जरूरत इस बात की है कि इस कानून की धारा–8 को लचीला बनाया जाए।

(5) सूचना के अधिकार अधिनियम के क्रियान्वयन की महत्त्वपूर्ण चिंता सूचना आयुक्तों की नियुक्ति की है। सूचना आयुक्त जन शिकायतों, निरस्त आवेदनों की समीक्षा तथा सूचना अधिकार अधिनियम के क्रियान्वयन के लिए किए जाने वाले प्रयासों की मॉनिटरिंग के महत्त्वपूर्ण कार्यों को करता है। सूचना आयोग की इस भूमिका की महत्ता को ध्यान में रखकर ही केन्द्र तथा राज्यों में मुख्य सूचना आयुक्त व सूचना आयुक्तों के पदों पर विधि, विज्ञान और प्रौद्योगिकी, समाज सेवा, प्रबन्धन, पत्रकारिता, जन माध्यम या प्रशासन का विशेष ज्ञान और अनुभव रखने वाले प्रख्यात व्यक्तियों को नियुक्त करने का प्रावधान रखा गया है। लेकिन अब तक केन्द्र तथा राज्य दोनों में नियुक्त अधिकांश सूचना आयुक्त पूर्व में नौकरशाह रहे हैं। सूचना आयुक्त के रूप में पूर्व नौकरशाहों की नियुक्ति से यह आशंका पैदा हो गई है कि यह अधिनियम भी नौकरशाही का सरकारी सूचनाओं पर अपना एकाधिकार मजबूत करने का एक और औजार बन कर रह जायेगा। आखिर जो नौकरशाह अपने सेवा काल में पारदर्शिता और जवाबदेही से बचते रहे हों, वे सूचना अधिकार कानून को लेकर कोई रचनात्मक माहौल कैसे बना सकते हैं? जब हम प्रशासनिक सेवा या पुलिस सेवा से जुड़े अधिकारी को जिसने अपने सेवा काल में गोपनीयता का समर्थन किया हो, को सूचना के अधिकार के संरक्षण का दायित्व देते हैं तो ऐसे अधिकारियों से यह आशा करना बेमानी है। केन्द्र और राज्य स्तर पर सूचना आयोग को प्रभावी एवं उपयोगी बनाने के लिए कुछ सुझाव दिए जा सकते हैं जो निम्नलिखित हैं –

(i) केन्द्रीय सूचना आयोग में मुख्य सूचना आयुक्त व सूचना आयुक्तों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा एक समिति की अनुशंसा पर की जाती है, इस समिति में सभी सदस्य जनप्रतिनिधि हैं। इसमें न्यायविदों को शामिल नहीं किया गया है, जबकि सूचना आयोग का कार्य भी न्यायालय की भांति है। अतः मेरा मानना है कि इस चयन समिति में न्यायिक प्रतिनिधि के रूप में सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश को भी शामिल किया जाना चाहिए।

(ii) केन्द्र एवं राज्यों में सूचना आयुक्त की योग्यताओं में एक योग्यता, प्रशासक एवं शासन का विशेष ज्ञान एवं अनुभव रखना भी शामिल है। इस आधार पर सरकार अपने चहेते, पक्ष लेने वाले अधिकारियों को नियुक्त कर सकती है जैसा कि प्रथम मुख्य सूचना आयुक्त के रूप में कर्नाटक के पूर्व मुख्य सचिव श्री बजाहत हबीबुल्ला की नियुक्ति पर आपत्तियां की गई थीं कि उन्हें कर्नाटक उच्च न्यायालय द्वारा सूचना दबाने के कारण पहले ही प्रताड़ित किया जा चुका है। अतः ऐसे लोकसेवकों की नियुक्ति न हो सके, इसके लिए सरकार को स्पष्ट नीति अपनानी चाहिए। सूचना आयुक्तों के पद पर समाज के विभिन्न वर्गों और क्षेत्रों के व्यक्ति आयुक्त पद पर नियुक्त किए जाने चाहिए। मेरा यह सुझाव है कि निर्योग्यताओं में यह भी शामिल करना चाहिए कि उसे प्रशासनिक पद पर कार्य करते समय किसी बात के लिए दण्डित नहीं किया गया हो। यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि संगठन विशेष के सच्चरित्र, सक्षम, ईमानदार और बेदाग अधिकारी के कंधों पर ही सूचना आयुक्त का बोझा डाला जाना चाहिए, कामचोर, अड़ियल या अनुशासनहीन अधिकारी पर कदापि नहीं।

(6) अधिनियम में निहित प्रावधान की धारा–5 में लोक सूचना अधिकारियों का उल्लेख किया गया है। इस कानून को धारा–5 के अंतर्गत लोक सूचना अधिकारी या अपीलीय अधिकारी की नियुक्ति करने के साथ लोक प्राधिकरण का दायित्व खत्म नहीं होता है। यह तो इस कानून की प्रथम सीढ़ी है। लोक सूचना अधिकारी के कार्य की गरिमा, महत्त्व और कार्य की बहुतायतता को देखते हुए इस कानून की क्रियान्विति के लिए पर्याप्त आवश्यक संसाधन, जैसे सहायक स्टाफ, कम्प्यूटर, बहुभाषी सॉफ्टवेयर, फैक्स मशीन, इंटरनेट सुविधा सहित सूचना देने के लिए बजट उपलब्ध कराया जाना जरूरी है।

(7) इस अधिनियम में सबसे बड़ी समस्या या बाधा यही है कि हर संगठन में रिकार्ड व्यवस्थित नहीं है। सूचना का उचित प्रवाह बनाये रखने के लिए रिकार्ड प्रबन्धन आवश्यक है। द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग ने भी अपनी रिपोर्ट जो सूचना का अधिकार को आधार बनाकर तैयार की गई है, में रिकार्ड प्रबन्धन को बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। आयोग ने यह माना है कि हमारी सूचना पद्धति की सबसे बड़ी कमजोरी सही अभिलेख पालन की बिल्कुल उपेक्षा का होना है। दसवें वित्त आयोग ने इसे ध्यान में रखते हुए, रिकार्ड प्रबन्धन को सुधारने के लिए राज्यों को विशेष अनुदानों की सिफारिश की थी। सूचना के अधिकार का तभी कार्यान्वयन किया जा सकता है जब अभिलेख प्रक्रियाओं का विकास, अभिलेखों की इन्डेक्सिंग और व्यवस्थित भण्डारण को अनिवार्य बनाया जाए। हमें ई–गवर्नेन्स और ई–प्रशासन को अपनाना होगा। सूचना के आवेदन की प्रक्रिया को कम्प्यूटरीकृत किया जाना चाहिए। ऑनलाईन व्यवस्था का विकास करना चाहिए ताकि समय की बचत हो सके। अतः रिकार्ड प्रबन्धन की प्रभावी व्यवस्था का निर्माण इस संदर्भ में एक महत्त्वपूर्ण कार्य है।

(8) अधिनियम की धारा 20 में यह सुनिश्चित करने के लिए जिन प्राधिकारियों पर सूचना देने का दायित्व है, वे यह कार्य पूरी सजगता से करें, इस कानून में भारी जुर्मानों का प्रावधान किया गया है। 250 रुपये प्रतिदिन के जुर्माने का प्रावधान तथा ऐसे जुर्माने की कुल रकम 25000 रुपये से अधिक नहीं होगी, रखा गया है।

अधिनियम को जब दिसम्बर, 2004 में संसद में पेश किया गया था तो उसमें यदि किसी लोक सूचना अधिकारी ने सूचना आवेदन लेने से मना किया हो, सूचना उपलब्ध नहीं कराई हो, जान–बूझ कर गलत, अपूर्ण या भ्रमोत्पादक सूचना दी हो तो पांच वर्ष के कारावास का प्रावधान था, लेकिन बाद में इस प्रावधान को हटा दिया गया। दूसरी तरफ अधिकतम 25000 रुपये का जुर्माना भी अपर्याप्त है। इस प्रकार करोड़ों रुपयों का घोटाला कर भ्रष्ट अधिकारियों के लिए इन प्रावधानों के अनुसार 25000 रुपये जुर्माना देना कोई घाटे का सौदा नहीं है। इससे भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिलेगा। अतः मेरा मानना है कि जुर्माना राशि को बढ़ाकर इसके साथ–साथ सजा का भी प्रावधान होना चाहिए। भ्रष्ट नौकरशाहों से अवैध तरीकों से कमाए गए धन की वसूली करने एवं उनकी सम्पत्ति को जब्त करने का प्रावधान होना चाहिए।

(10) अधिनियम में जानकारी प्राप्त करने के शुल्क अदायगी के सम्बन्ध में अस्पष्टता एवं एकरूपता नहीं होने से देश एवं राज्यों के नागरिकों को सूचना प्राप्त करने में परेशानी का सामना करना पड़ता है। सूचना कानून की धारा 6(1) में सूचना आवेदन शुल्क की बात कही गई है। केन्द्र सरकार ने सूचना का अधिकार अधिनियम के अनुसार शुल्क निर्धारण कर दिया है। सूचना के लिए आवेदन के साथ 10 रुपये का शुल्क लगाया गया है। इसके अलावा मांगे गए दस्तावेज की प्रति पर 2 रु. प्रति पृष्ठ का प्रभार लगाया गया है।

अधिनियम की धारा 27 के अनुसार राज्य सरकारों को शुल्क निर्धारित करने का अधिकार दिया गया है। इस धारा के अंतर्गत कुछ राज्यों ने तो आवेदन करने के लिए 50 रुपये की फीस निर्धारित कर दी है। तमिलनाडु, गुजरात, उड़ीसा तथा कर्नाटक राज्यों में सूचना आवेदन का शुल्क अलग–अलग निर्धारित कर रखा है। विभिन्न राज्यों में आवेदन के लिए समान शुल्क के अभाव में नागरिकों में भ्रम की स्थिति उत्पन्न होती है। मेरा मानना है कि सूचना के अधिकार के प्रभावी इस्तेमाल के लिए पूरे देश में एक समान शुल्क की दरें निर्धारित करनी चाहिए। शुल्क को लेकर भी आम लोगों में जानकारी का अभाव है। शुल्क का भुगतान डिमाण्ड ड्राफ्ट, पोस्टल ऑर्डर या नकद दिया जा सकता है, लेकिन कुछ प्राधिकरण बैंक डिमाण्ड ड्राफ्ट स्वीकार करते हैं। इससे आवेदनकर्ता को 35 रु. डिमाण्ड ड्राफ्ट शुल्क अलग से देना पड़ता है। सुझाव यह है कि शुल्क हेतु डाक–टिकट की तरह 10 रु. का डाक रसीदी टिकट बनाया जाना चाहिए।

(11) विश्व के जितने भी देशों में सूचना का अधिकार देने वाले कानून बने हैं, उनमें किसी भी देश में निजी क्षेत्र को इस कानून के दायरे में नहीं लाया गया है। भारत का सूचना अधिकार कानून भी इसका अपवाद नहीं है। भारतीय प्रेस परिषद के मॉडल विधेयक के अलावा किसी ने निजी क्षेत्र को पारदर्शी बनाने की आवश्यकता महसूस नहीं की है। भारत में भूमण्डलीकरण एवं उदारीकरण की अर्थव्यवस्था की शुरुआत 1991 से मानी जाती है, तब से निजी क्षेत्र की भूमिका बढ़ी है और सार्वजनिक जीवन के हर क्षेत्र में इनका हस्तक्षेप बढ़ा है। ऐसे में उसे जवाबदेह बनाने के सवाल को दरकिनार नहीं किया जा सकता। निजी क्षेत्र के क्रियाकलापों को गोपनीय रखने का सीधा प्रभाव आमजन पर पड़ता है। इन निजी उद्योगों में ऐसी वस्तुओं का उत्पादन किया जाता है, जिनका सम्बन्ध आम लोगों के जीवन, पर्यावरण–संतुलन और प्रदूषण से है। अगर भारत का संविधान नागरिकों को जीने का अधिकार देता है तो फिर जनता को ऐसी जानकारी प्राप्त करने का अधिकार भी होना चाहिए, जो जीने के लिए आवश्यक है। जनता को यह भी जानने का अधिकार है कि किस उद्योग में कौनसी जहरीली गैस निकलती है? कौनसा उद्योग पर्यावरण को प्रदूषित करता है? इन गैसों से नागरिकों के बचने के उपाय क्या हैं? भारत में इन निजी क्षेत्रों द्वारा सूचनाएं आम जनता को नहीं देने से आम जन पर क्या दुष्प्रभाव हो सकते हैं?

ठीक इसी तरह उपभोक्ता वस्तुओं के बारे में अपर्याप्त जानकारियों को लेकर प्रश्न उठते रहे हैं। भारत में सूई से लेकर हवाई जहाज तक और नमक से लेकर श्रृंगार सामग्री तक का उत्पादन निजी क्षेत्र करता है। इन निजी कम्पनियों को अपने उत्पाद के सकारात्मक पक्ष को विज्ञापनों के माध्यम से प्रचारित करने का अधिकार तो है, लेकिन इन उत्पादों के नकारात्मक पक्षों को जानने का अधिकार उपभोक्ताओं को नहीं है। हमारे देश में जो स्थिति स्वास्थ्य चेतना और उपभोक्ता जागरूकता की है उससे भी बुरी स्थिति शेयर बाजार की भी है। शेयरों में निवेश करने वाले शेयरधारकों के लिए सूचनाओं का महत्त्व इतना है कि जिनके पास सूचनाएं हैं वे रातों–रात करोड़पति बन सकते हैं और जिनके पास पर्याप्त सूचनाएं नहीं हैं, वे रातों–रात सड़क पर आ सकते हैं।

सूचना का अधिकार अधिनियम की धारा 2 में ऐसे सभी निकाय जो केन्द्र तथा राज्य सरकारों के स्वामित्व या नियंत्रण में है अथवा उनके द्वारा पर्याप्त रूप से वित्त पोषित हैं, यहाँ तक कि ऐसे गैर–सरकारी निकायों, जो किसी सरकार द्वारा वित्त पोषित हैं, को भी इस अधिनियम के दायरे में लाया जा सकता है। लेकिन इन सबके बावजूद निजी क्षेत्र इस अधिनियम के दायरे से बाहर हैं। भारत में इन निजी क्षेत्र की कम्पनियों को भारत सरकार द्वारा भूमि, बिजली इत्यादि मूलभूत सुविधाएं दी जाती हैं। अतः इन निजी क्षेत्रों को भी सूचना के अधिकार के दायरे में लाना चाहिए।

(12) निजी क्षेत्रों को सूचना के अधिकार के दायरे में ले आने का अर्थ गैर सरकारी क्षेत्र को भी इसके दायरे में ले आना है। हाल ही में सी.बी.आई. की रिपोर्ट के आधार पर भारत में गैर–सरकारी संगठनों की संख्या बीस लाख से ज्यादा है। भारत सरकार अपनी पंचवर्षीय योजनाओं में गैर–सरकारी संगठनों को धनराशि प्रदान करती है। भारत में सी.बी.आई. की रिपोर्ट में जो खुलासा हुआ है, वह यह जाहिर कर रहा है कि कई एन.जी.ओ. नेक इरादों से काम नहीं कर रहे हैं। वे समाज सेवा की बजाय नीतिगत कार्यों में हस्तक्षेप कर रहे हैं। कुछ गैर–सरकारी संगठनों से हमारे देश की सुरक्षा व्यवस्था को भी खतरा बन सकता है। इसलिए पारदर्शी और जवाबदेह बनाने के लिए इस क्षेत्र को भी इस अधिकार के दायरे में लाना होगा।

(13) भारत के संविधान की प्रस्तावना में देश की जनता को लोकतंत्र का स्वामी माना गया है। जनता ही अपने प्रतिनिधियों का चुनाव करती है। उसी जनता से राजनीतिक दल धन प्राप्ति के स्रोत छिपाना चाहते हैं। भारत में जनता को यह जानने का अधिकार होना चाहिए कि राजनीतिक दलों का वार्षिक खर्च कितना है? यह कहाँ से आता है? यह सब जानने का अधिकार आखिर मतदाता को क्यों नहीं दिया जाता है? एक ओर तो राजनीति को अपराधीकरण से मुक्त किये जाने की बातें की जा रही हैं, वहीं दूसरी ओर गलत तरीकों से एकत्र किए गए चन्दे के स्रोतों को गोपनीयता का जामा ओढ़ाने का प्रयास किया जा रहा है। सरकारी भ्रष्टाचार की जड़ राजनीतिक दलों में पलती है। पार्टी भ्रष्टाचार इसलिए दबा रहता है कि उसका कोई हिसाब–किताब नहीं रखा जाता। दलों में पारदर्शिता के अभाव में ही भ्रष्टाचार को बढ़ने का अवसर मिलता है। अतः भारत में राजनीतिक दलों को सूचना के अधिकार कानून के दायरे में लाये बिना सत्ता शीर्ष से भ्रष्टाचार को समाप्त नहीं किया जा सकता है।

(14) लोकतंत्र में किसी राष्ट्र का आर्थिक, सामाजिक और वैज्ञानिक विकास खोखला है, यदि उस लोकतंत्र के स्वामी अपने दायित्वों और अधिकारों के प्रति जागरूक नहीं है।

अब्राहम लिंकन का यह कथन इस संदर्भ में सही है कि – "सही जानकारी से परिपूर्ण जागरूक जनता के सामने हर चुनौती और चट्टान छोटी पड़ जाती है। जानकारी नहीं होने से लोकतंत्र ध्वस्त और तितर–बितर हो जाता है।"

अतः प्रजातंत्र को मजबूत बनाने के लिए सूचना का अधिकार कानून के प्रति नागरिकों को जागरूक बनाने तथा प्रशिक्षित करने के लिए देश के विभिन्न भागों में विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में जन जागरूकता कार्यक्रमों का आयोजन किया जाना चाहिए। इसके अलावा इस अधिनियम के प्रावधानों के सम्बन्ध में विभिन्न स्तरों पर सेमीनार, विचार–गोष्ठियों, नुक्कड़, नाटकों तथा प्रदर्शनियों के माध्यम से भी इससे सम्बन्धित जानकारी दी जा सकती है। प्राथमिक और उच्च शिक्षा स्तर पर, अलग–अलग संस्थाओं द्वारा चलाए जाने वाले प्रशिक्षण या शिक्षण कार्यक्रमों में इस अधिनियम से सम्बन्धित मुख्य तथ्यों की जानकारी दी जानी चाहिए।

(15) अधिनियम की प्रभावशीलता तथा इसके प्रभावी क्रियान्वयन के लिए समीक्षा बैठकें आयोजित की जानी चाहिए। लोक सूचना अधिकारियों, सूचना आयुक्तों, आर.टी.आई. कार्यकर्ताओं तथा प्रशासनिक अधिकारियों को शामिल किया जाना चाहिए। इस प्रकार की खुली बैठकों से मिलने वाले सुझावों तथा शिकायतों को संगृहीत कर आम राय कायम करनी चाहिए। यदि आवश्यक हुआ तो इस कानून के प्रभावी क्रियान्वयन हेतु इसमें संशोधन की व्यवस्था भी की जा सकती है।

(16) भ्रष्टाचार, मानवाधिकार हनन, आतंकवाद और वित्तीय लेन–देन के बारे में आगाह करने वाले आर.टी.आई. कार्यकर्ताओं को जान से मारने की धमकियां दी जाती हैं। कई मामलों में उन्हें जान से भी मार दिया गया। अमित जेठवा, संदीप शेट्टी, शहला मसूद के उदाहरण हमारे सामने हैं। मेरा यह सुझाव है कि इस प्रकार के मामलों में कोई शिकायत आने पर सरकार को इन लोकतंत्र के प्रहरियों की रक्षा व सुरक्षा तुरन्त उपलब्ध करवानी चाहिए। अधिनियम में संशोधन कर इनकी सुरक्षा व्यवस्था के लिए भी इंतजाम करना चाहिए।

(17) भारत में आदिम कही जाने वाली जनजातियों में जन सुनवाई की परम्परा प्राचीनकाल से रही है। उक्त परम्परा का अनुकरण करते हुए ग्राम स्तर पर स्थापित पंचायतों या सहकारी समिति संस्थाओं के क्रियाकलाप पारदर्शी हो, इसलिए आमजन की शिकायतों का निपटारा करने के लिए जन सुनवाई की व्यवस्था की जानी चाहिए। जन सुनवाई एवं सामाजिक अंकेक्षण की व्यवस्था बैंक, बीमा कम्पनियों, नगर पालिका, जिला परिषदों इत्यादि अन्य संस्थाओं पर भी लागू करनी चाहिए।

(18) ऐसा कहा जाता है कि भारत में कानून बाद में बनता है, पहले से ही उस कानून के चोरदरवाजे बना लिये जाते हैं। ऐसे दरवाजे न बनने पायें, इन दरवाजों को रोकने के लिए ऐसी संस्कृति तैयार करनी चाहिए जो संवेदनशील, पारदर्शी प्रशासन की पक्षधर हो। यह सत्य है कि समाज या राज व्यवस्था को बदलने की संस्कृति में समय लगता है किन्तु यदि अधिकारियों व नागरिकों का प्रयास सतत् व पूर्ण इच्छाशक्ति से हो, तो भविष्य में परिणाम सकारात्मक होंगे।

निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि सूचना का अधिकार खुलापन, पारदर्शिता और जवाबदेही का नया युग लाने वाला एक शक्तिशाली यंत्र है। यह अधिकार शक्ति के दुरुपयोग, अव्यवस्था और भ्रष्टाचार के विरुद्ध एक प्रभावी सुरक्षा कवच का काम करता है। यदि भारत के संविधान की प्रस्तावना के अनुसार शासन–व्यवस्था में वास्तव में जनता को सहभागी बनाना है तो जनता को भी शासकीय कार्यों के प्रति जागरूकता रखनी होगी और शासक वर्ग को भी गोपनीयता की राजशाही मानसिकता को त्यागना होगा। अधिकारी वर्ग को यह समझना होगा कि वे जनता के सेवक हैं, इस कारण जानकारी देना उनका कर्त्तव्य है। मरीज का उपचार करने के लिए डॉक्टर मरीज से ई.सी.जी., खून की जाँच सम्बन्धी जानकारियां लेता है। मरीज के मुँह, आँख को बार–बार खुलवाकर देखता है। मरीज से उन्हीं चीजों और शरीर के विभिन्न अंगों से सम्बन्धित विषयों पर सवाल करता है जिसे वह गोपनीय रखना चाहता है। इस प्रकार डॉक्टर के रूप में जनता को, मरीज के तौर पर प्रशासनिक अधिकारियों को जानकारियाँ देनी चाहिए।

अन्त में सूचना का अधिकार तभी सार्थक होगा, जब शासक वर्ग में यह भावना पैदा हो जाए कि – **यथेमां वाचं कल्याणीम् आवदानि जनेभ्यः (यजुर्वेद)।** अर्थात् यह जानकारी मैं जन–जन को दूँगा, क्योंकि यही हितकारी होगा।

संदर्भ :–

[1] राय, अरुणा, डे, निखिल : "पारदर्शी शासन का अधिकार", किसान शक्ति संगठन प्रतिवेदन, जुलाई, 1996, संकलन, विकास अध्ययन संस्थान, जयपुर

[2] राय, अरुणा, डे, निखिल : "भारत में जानने के अधिकार की लड़ाई", नई दिल्ली, मंथन, 2006, पृ. 47

[3] डायमण्ड इण्डिया, जून–जुलाई, 2005, संयुक्तांक, पृ. 31

[4] पाण्डेय, अरुण : "हमारा लोकतंत्र और जानने का अधिकार", वाणी प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ. 80

[5] कटारिया, डॉ. सुरेन्द्र : सूचना का अधिकार – ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य, विधान बोधनी, राजस्थान विधानसभा सचिवालय, जयपुर, जुलाई, 2007 अंक, पृ. 14

[6] राजस्थान पत्रिका : कम जोखिम में ज्यादा कमाई, सम्पादकीय लेख, दिनांक 20 नवम्बर, 2011

[7] राजगढ़िया, विष्णु एवं केजरीवाल, अरविन्द : "सूचना का अधिकार", राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 48

[8] मिश्रा, डॉ. एन. : सूचना की पहचान और पहुंच, मंथन, जनवरी–मार्च, 2006 अंक, पृ. 45

[9] राजस्थान पत्रिका, जयपुर, दिनांक 28 अक्टूबर, 2013, पृ. 8

[10] वही, पृ. 8